पाँच महाव्रत

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,

पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

भारतीय संस्कृति व्रतों की संस्कृति है। यहां के निवासी प्रायः हर महीने कोई न कोई व्रत रखकर आत्मा को शुद्ध करते है। व्रत का मतलब होता है संकल्प। महाव्रत का तात्पर्य है ऐसा व्रत जिसमें किसी प्रकार का अपवाद न हो। निरापद रूप से जिस व्रत का आचरण किया जाता है वहीं महाव्रत कहलाता है। महाव्रत पाँच हैं– अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह। जैन धर्म का मूलाधार ही अहिंसा है। हिंसा कभी भी धर्म नहीं हो सकती। इस विराट् विश्व में जितने भी प्राणी हैं, वे चाहे छोटे हों या बड़े हों, पशु हों या मानव हों, सभी जीवित रहना चाहते हैं, कोई भी मरना नहीं चाहता। अहिंसा में सभी प्राणियों के कल्याण की भावना निहित है। प्रश्न व्याकरण में कहा गया त्रस, स्थावर सभी भूतनिकायों का मंगल करने वाली अहिंसा है। मनुष्य हिंसा क्यों करता है? हिंसा का कारण क्या है? इस प्रश्न का उत्तर आचाराङ्ग में दिया गया है। हिंसा का प्रमुख कारण मानव का अज्ञान है। तत्त्व से अनभिज्ञ होने के कारण मनुष्य विषय, कषाय आदि मानसिक दोषों से पीड़ित है। इसलिए वह हिंसात्मक प्रवृत्ति करता है। भगवान् महावीर ने छह जीवनिकायों की प्ररूपणा की है। इनमें पृथ्वी, अप, तेजस्, वायु, वनस्पति और त्रस की प्ररूपणा की गयी है। जब तक जीव का ज्ञान नहीं होता, तब तक हिंसा से छुटकारा नहीं मिल सकता। द्वितीय महाव्रत के रूप में सत्य की गणना की गयी है। जैसा हुआ है, वैसा ही कहना सत्य का सामान्य लक्षण है, परन्तु अध्यात्म मार्ग में स्व पर अहिंसा की प्रधानता होने से हित व मित वचन को सत्य कहा जाता है। 'सत्य' पद अनेकार्थी है–सत्, सद्भाव, तत्त्व, तथ्य, सार्वभौमनियम, भूतोद्भावन संयम, काय, भाव और भाषा की ऋजुता तथा अविसंवादन योग, यथार्थवचन, अगर्हितवचन, व्यवहाराश्रित वचन और प्रतिज्ञा ये सत्य के अर्थ हैं। सामान्यतया स्तेय से तात्पर्य है चोरी और अस्तेय का तात्पर्य है चोरी न करना। स्तेय और अस्तेय के अनेक रूप बताए गए हैं। किसी की निन्दा करना, किसी के दोषों को देखना, चुगली करना, अन्य जीवों के प्राणों का अपहरण करना, दूसरे के अधिकार को छीनना, किसी की भावना को ठेस पहुंचाना, किसी के साथ अन्याय करना आदि सभी स्तेय

के अन्तर्गत आते हैं। अस्तेय महाव्रत के साधक को इन सभी प्रवृत्तियों से अपने को बचाना होता है। स्तेय के लिए 'अदत्तादान' शब्द का प्रयोग हुआ है। बिना दी गयी वस्तु को स्वयं की इच्छा से उठाना, स्वामी की अनुमति के बिना किसी भी वस्तु को ग्रहण करना व उसका उपभोग एवं उपयोग करना अदत्तादान है। इसे ही चोरी कहते हैं। एकमहाव्रत के रूप में जब कोई साधक इस महाव्रत को स्वीकार करके उसका आचरण करता है तब वह बिना दिए किसी भी वस्तु को ग्रहण नहीं करता। महाव्रतों से सम्बन्धित ब्रह्मचर्य महाव्रत का विशेष महत्त्व है। ब्रह्मचर्य का अर्थ है–आत्मविद्या या आत्मविद्याश्रित आचरण। ब्रह्मचर्य' शब्द दो शब्दों के योग से बना है–'ब्रह्म' और 'चर्य'। 'ब्रह्म' शब्द के मुख्यतः तीन अर्थ हैं–ब्रह्म=वीर्य, ब्रह्म=आत्मा, ब्रह्म=विद्या। 'चर्य' शब्द के भी तीन अर्थ हैं–'रक्षण, रमण तथा अध्ययन।' इस तरह ब्रह्मचर्य के तीन अर्थ है–वीर्य रक्षण, आत्म–रमण और विद्याध्ययन। केवल वीर्यरक्षा या जननेन्द्रिय विषयक संयम ब्रह्मचर्य का अधूरा अर्थ है। ब्रह्मचर्य का विधेयात्मक रूप तो अपनी आत्मा या परमात्मा की उपासना में लगना है। वीर्यरक्षा करना, योग साधना करना, विद्याध्ययन करना, किसी विशाल ध्येय को सामने रखकर या निश्चित करके तदनुसार आचरण करना–ये सब आत्मोपासना के लिए सहायक ब्रह्मचर्य के विधायक रूप हैं। अपरिग्रह महाव्रत को जानने के लिए परिग्रह को जानना आवश्यक है। परिग्रह का अर्थ है–ममत्व बुद्धि से किसी वस्तु का ग्रहण करना। परिग्रह का अर्थ है– किसी वस्तु का समस्त रूप से ग्रहण करना, अथवा मूर्च्छावश जिसे ग्रहण किया जाता है या अपनेपन–मेरेपन के भाव से यह 'मेरी है', इस बुद्धि से जिसे ग्रहण किया जाय, उसे परिग्रह कहते हैं। भगवान् महावीर ने मूर्च्छा को ही परिग्रह कहा है। परिग्रह महाभय का हेतु है। परिग्रही व्यक्ति को आत्मानुभूति नहीं होती। जो परिग्रह में प्रमत्त हैं, वे पदार्थों को पाकर प्रसन्न होते हैं। अपरिग्रही मनुष्य ही सत्य का दर्शन कर सकता है। जो व्यक्ति सांसारिक भोगविलास में लिप्त है उसे सत्य का दर्शन नहीं हो सकता। अपरिग्रही पदार्थों में ममत्व नहीं करता। अपरिग्रह के तत्त्व को प्राप्त कर व्यक्ति अपने जीवनदशा का परिवर्तन कर सकता है। जब तक पदार्थ के प्रति मूर्च्छा का भाव दूर नहीं होता, तब तक हिंसा और असत्य का भाव भी दूर नहीं हो सकता। पांचों महाव्रत एक दूसरे के पूरक और सहयोगी हैं एक भी व्रत की विराधना करने वाला अन्य की विराधना करता ही है। परिग्रह

रखने वाला हिंसा से बच नहीं सकता और हिंसा करने वाला परिग्रह से नहीं बच सकता। इस प्रकार पांच महाव्रतों के विवेचन में मानव धर्म के प्राणस्वरूप अहिंसा महाव्रत का प्राधान्य दृष्टिगोचर होता है। इसी की विशुद्धि के लिए सभी आचार विचार का प्रतिपादन हुआ है। भारतीय संस्कृति में इन पांचों महाव्रतों का विशिष्ट स्थान है। इसकी आराधना करने से मनुष्य मोक्षमार्ग का पथिक बन जाता है और उसका जीवन निर्द्वन्द्व रूप से व्यतीत होता है। उसके जीवन में किसी भी प्रकार का संकट नहीं आता। ऐसा साधक आत्म आराधक हो जाता है। भारतीय संस्कृति में पांचों महाव्रतों का विशिष्ट स्थान रहा है। यह संस्कृति का प्राण है। भारत को विश्व गुरू का दर्जा इसी के आधार पर प्राप्त है। मानव जीवन का यह आदर्श है।